(1) Critically examine the classical Theory of Employment.
रोजगार के परम्परावादी सिद्धांत की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए।

Ans - रोजगार के परंपरावादी सिद्धांत का प्रतिपादन रिकार्डो (Ricardo) के अनुयायियों जिनमें जे॰ एस॰ मिल (J.S. Mill), मार्शल (Alfred Marshall) तथा पीगू (A.C. Pigou) आदि आते हैं, ने किया है। रोजगार के परम्परावादी सिद्धांत के अनुसार अर्थव्यवस्था में सदा पूर्ण रोजगार (Full Employment) की स्थिति विद्यमान रहती है। यदि किसी समय वास्तव में पूर्ण रोजगार की स्थिति नहीं भी रहती है तब भी अर्थव्यवस्था की प्रवृत्ति (Tendency) बराबर पूर्ण रोजगार की ओर ही रहती है। साधारण परिस्थिति तो यह है कि पूर्ण रोजगार के स्तर पर अर्थव्यवस्था का स्थायी संतुलन (Stable Equilibrium) होता है। परम्परावादी अर्थशास्त्रियों के अनुसार यदि संतुलन में कोई व्यवधान उत्पन्न होता है तो इसका कारण बाजार की मुक्त शक्तियों (Free play of market forces) के साथ सरकार अथवा निजी एकाधिकार (Private Monopoly) द्वारा किया गया हस्तक्षेप है। अतः यदि इस प्रकार का हस्तक्षेप न रहे तो अर्थव्यवस्था में बराबर पूर्ण रोजगार की स्थिति विद्यमान रहेगी दूसरे शब्दों में, अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार की स्थिति बनाए रखने के लिए यह आवश्यक है कि समाज में आर्थिक स्वतंत्रता (Laissez faire) रहे अर्थात सरकार निजी उपक्रम (Private enterprise) पर नियंत्रण न करे। परम्परावादी अर्थशास्त्रियों के अनुसार यदि किसी उद्योग अथवा फर्म में अधिक मजदूर अथवा साधन लगे हुए हों तो इसका मतलब यह है कि वे किसी दूसरे उद्योग अथवा फर्म से लिये गए होंगे जहाँ उनकी कमी होगी। अतः मजदूरों अथवा साधनों को वास्तव में एक स्थान के रोजगार एवं दूसरे स्थान के रोजगार के बीच चयन करना पड़ता है, न कि रोजगार एवं बेरोजगारी के बीच चयन का प्रश्न उठता है। इसका कारण यह है कि साधन पूर्ण रोजगार

की स्थिति में होते हैं।

परामर्शवादी अर्थशास्त्रियों की पूर्ण रोजगार की मान्यता जे० बी० से के बाजार नियम (J. B. Say's law of market) पर आधारित है। जे० बी० से के नियम के अनुसार अर्थव्यवस्था में सामान्य बेरोजगारी (General Unemployment) तथा अति-उत्पादन (Over-Production) की स्थिति उत्पन्न हो ही नहीं सकती अर्थात् कुल माँग की अपर्याप्तता की संभावना (Possibility of a dificiency of aggregate demand) हो ही नहीं सकती। J. B. Say का बाजार नियम इस मान्यता पर आधारित है कि "पूर्ति अपनी माँग का सृजन स्वयं करती है।" (Supply creats its own demand)। इसका मतलब यह है कि प्रत्येक उत्पादक बाजार में वस्तुएँ इसलिए बेचने को लाता है ताकि उससे वह दूसरी वस्तुओं को खरीद सके। लोग काम एवं उत्पादन इसलिए करते हैं ताकि वे उपभोग द्वारा संतोष प्राप्त कर सकें। अतः अर्थव्यवस्था में जो कुछ भी उत्पादित किया जाता है उससे दूसरी वस्तुओं के लिए मांग का सृजन होता है। अतिरिक्त पूर्ति (Additional supply) अतिरिक्त मांग (Additional demand) होता है। इस प्रकार की व्यवस्था वस्तु विनिमय प्रणाली (Barter System) में लागू होती है लेकिन मुद्रा के आगमन से इस प्रक्रिया में कोई व्यवधान उत्पन्न नहीं होता। मुद्रा तो केवल विनिमय प्रणाली को और सुलभ बना देती है। जब कोई साधन उत्पादन में लगाया जाता है तो उससे वस्तु की उत्पत्ति होती है और उत्पादन में लगे साधनों को उनकी आय के रूप में अदायगी की जाती है। इस प्रकार उत्पादित वस्तुओं की बिक्री से नियोक्ता को जो रकम प्राप्त होती है, वह उत्पादित वस्तुओं की लागत के बराबर होती है। यदि उत्पादन में लगे साधन अपनी उत्पादकता के अनुकूल पारिश्रमिक लेने को तैयार रहें। इसका मतलब यह नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति को ठीक वे ही वस्तुएँ खरीदनी चाहिए जिनको वह उत्पादित करता है, वरन इसका मतलब

यह है कि उसके रोजगार से उसे जो नई आय प्राप्त होती है, उसके द्वारा उतनी मात्रा में वस्तुओं की माँग का सृजन होगा जितनी मात्रा में उसने अपने रोजगार द्वारा वस्तु का उत्पादन किया है। इस प्रकार जब तक वस्तु के उत्पादन का निर्देशन ठीक ढंग से होगा तबतक जो कुछ भी उत्पादित होगा, वह बाजार में बिक जाएगा। यदि उत्पादन का निर्देशन ठीक ढंग से नहीं हुआ तो किसी वस्तु की अस्थायी रूप से आवश्यकता से अधिक पूर्ति हो सकती है लेकिन जब तक पूर्ति माँग का सृजन स्वयं करती है तब तक सामान्य अति-उत्पादन नहीं हो सकता। जे. बी. से के बाजार नियम के अनुसार, अर्थव्यवस्था में अति उत्पादन की स्थिति उत्पन्न नहीं हो सकती अर्थात् कुल माँग की अपर्याप्तता की संभावना हो ही नहीं सकती। इस प्रकार पूर्ण रोजगार की स्थिति पहुँचने तक साधनों को रोजगार में लगाना सदा लाभदायक होगा, यदि वे अपनी ~~~~ भौतिक उत्पादकता (Physical Productivity) के अनुरूप पारिश्रमिक लेने को तैयार रहें। अतः यदि श्रमिक अपनी क्षमता के अनुसार पारिश्रमिक लें, तो सामान्य बेरोजगारी (General Unemployment) हो ही नहीं सकती।

मौद्रिक अर्थव्यवस्था में बाजार का नियम — प्रो. से के नियम को जब हम मौद्रिक अर्थव्यवस्था में लागू करते हैं तो स्पष्ट होता है कि माँग का मुख्य स्रोत आय है जो उत्पादन प्रणाली से पैदा होती है। जब उत्पादक उत्पादन करने के लिए उत्पत्ति के साधनों को लगाता है तो उन साधनों को लगान, मजदूरी ब्याज के रूप में आय प्राप्त होती है। इससे उत्पादित वस्तुओं की माँग होती है। इस तरह जो पूर्ति होती है, उससे उसकी माँग पैदा हो जाती है। यह इस मान्यता पर आधारित है कि साधनों को जो आय प्राप्त होती है, उसे उन वस्तुओं

Scanned with CamScanner

पर खर्च कर दिया जाता है, जिनका वे उत्पादन करते हैं। आय का जो कोई व्यय नहीं किया जाता, उसको स्वतः विनियोग कर दिया जाता है। इस तरह बचत और विनियोग दोनों बराबर होते हैं।

परम्परावादी /प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के अनुसार समाज की बचत एवं विनियोग में समानता, ब्याज की दर द्वारा स्थापित होती है। यदि बचत अधिक होती है तो ब्याज की दर में होने वाले परिवर्तन, बचत को कम करके विनियोग को उस मात्रा तक बढ़ाते हैं, जब तक कि बचत एवं विनियोग दोनों बराबर नहीं हो जाते। ब्याज की दर में वृद्धि होने से, बचत की मात्रा में वृद्धि हो जाती है तथा ब्याज की दर में कमी होने से बचत की मात्रा घट जाती है। ब्याज की दर घटने से विनियोग को प्रोत्साहन मिलता है तथा अतिरिक्त बचत का विनियोग हो जाता है।

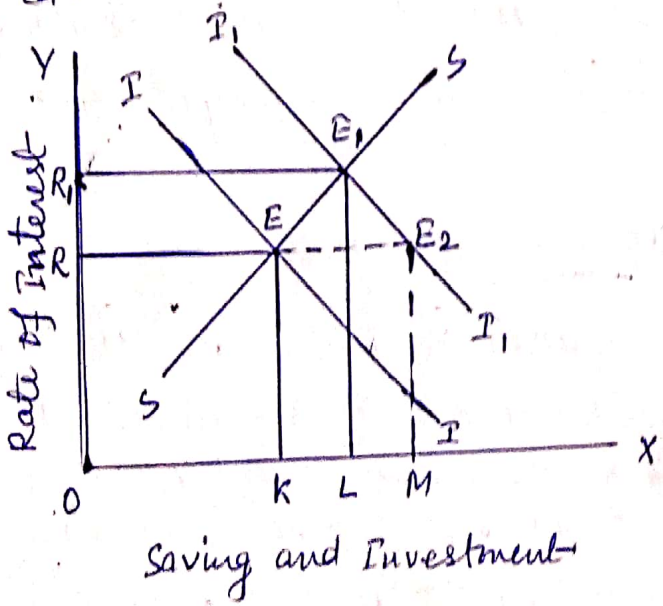

बचत और विनियोग में समानता को रेखाचित्र द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है —

इस रेखाचित्र में SS बचत वक्र तथा II विनियोग वक्र है। दोनों वक्र E बिन्दु पर एक दूसरे को काटते हैं, जहाँ पर OR

ब्याज की दर निर्धारित होती है। इस बिन्दु पर बचत और विनियोग की माता OK के बराबर है। अब यदि विनियोग बढ़कर I_1I_1 हो जाता है तो OR ब्याज की दर पर विनियोग की माता OM, जो बचत की माता OK से अधिक है। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के अनुसार विनियोग में वृद्धि होने पर बचत में वृद्धि नहीं होता अतः बचत और विनियोग में समानता बनाए रखने के लिए ब्याज की दर में वृद्धि होगी। रेखाचित्र में ब्याज दर OR से बढ़कर OR_1 हो जाती है। इस ब्याज की दर पर बचत वक्र और बढ़े हुए विनियोग वक्र I_1I_1 एक दूसरे को E, बिन्दु पर काटते हैं। इस बिन्दु पर बचत और विनियोग दोनों की माता OL के बराबर होती है।

इस प्रकार ~~यदि~~ वास्तव में बचत उत्पादक वस्तुओं पर किया गया व्यय अथवा विनियोग है। ब्याज की दर की प्रक्रिया द्वारा समाज की बचत समाज के विनियोग के बराबर होती रहती है। बचत एक प्रकार का व्यय है। अतः प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के अनुसार समाज की सारी आय अंशतः विनियोग अथवा उपादक वस्तुओं पर व्यय कर दी जाती है। आय के इस प्रवाह में व्यवधान उत्पन्न होने का कोई कारण नहीं है और इस प्रकार "पूर्ति अपनी मांग का सृजन स्वयं करती है।"

प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के अनुसार पूर्ण रोजगार की स्थिति में कुछ मात्रा में ऐच्छिक बेरोजगारी (Voluntary Unemployment) एवं कुछ मात्रा में अस्थिर बेरोजगारी (Frictional Unemployment) रह सकती है क्योंकि इन दोनों प्रकार की बेरोजगारियों को वास्तविक अर्थ में बेरोजगारी नहीं कह सकते और ये किसी भी गतिशील समाज में सदैव विद्यमान रहती है। अस्थिर बेरोजगारी तब उत्पन्न होती है, जब श्रम बाजार की अपूर्णता के कारण लोग

Scanned with CamScanner

अस्थायी रूप से बेरोजगार हो जाते हैं। ऐच्छिक बेरोजगारी वह अवस्था है जिसमें मजदूर प्रचलित मजदूरी की दरों पर काम करना नहीं चाहते। अर्थव्यवस्था में उद्योगों में प्रायः उत्थान-पतन होते रहते हैं जिससे मजदूर एक उद्योग से दूसरे उद्योग में आना चाहते हैं। लेकिन कई कारणों से उनमें कुछ समय लग जाता है जिससे मजदूर बेकार हो जाते हैं, जिसे अस्थिर बेरोजगारी कहते हैं। लेकिन प्रतिष्ठित अर्थ-शास्त्रियों के अनुसार पूर्णरोजगार की स्थिति में अनैच्छिक बेरोजगारी (Involuntary Unemployment) हो ही नहीं सकती। प्रतिष्ठित सिद्धांत में अनैच्छिक बेरोजगारी का अस्तित्व ही नहीं है अर्थात् ऐसा कभी नहीं हो सकता कि लोग काम करना चाहते हैं और उन्हें रोजगार न मिले। पूर्ण रोजगार-वाली अर्थव्यवस्था में रोजगार की इच्छा रखने वाले हर व्यक्ति के लिए रोजगार के अवसर उपलब्ध होंगे।

इस प्रकार प्रतिष्ठित अर्थशास्त्री अनैच्छिक बेरोजगारी के अस्तित्व को अस्वीकार कर देते हैं लेकिन वास्तविक जीवन में बड़ी संख्या में ऐसे लोग दृष्टिगोचर होते हैं, जो काम करना चाहते हैं लेकिन उन्हें रोजगार नहीं मिलता। इस पर प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों का कहना है कि बाजार की मुक्त शक्तियों के साथ अब सरकार अथवा श्रम संघों की सामूहिक कार्यवाही (collective action) द्वारा हस्तक्षेप किया जाता है तभी बेरोजगारी की स्थिति उत्पन्न होती है, इन हस्तक्षेपों में - (1) श्रम संघों द्वारा सामूहिक सौदेबाजी (collective bargaining)

(2) सरकार द्वारा पारित न्यूनतम मजदूरी कानून (Minimum wage laws)

(3) बेरोजगारी बीमा (Unemployment Insurance)

(4) बेरोजगारों को मिलने वाली सरकारी सहायता आदि।

Scanned with CamScanner

इन हस्तक्षेपों के कारण अपूर्ण श्रम बाजार (Imperfect Labour Market) का सृजन होता है जिससे मजदूरी की दरें प्रतियोगिता के स्तर तक नहीं गिर पाती। इस प्रकार श्रमिकों एवं उनके हितैषियों के सकाधिकारपूर्ण व्यवहार के कारण बेरोजगारी उत्पन्न होती है।

प्रतिष्ठित रोजगार सिद्धांत: पीगू का संशोधन
(Pigou's Version of Employment Theory)

Prof. Pigou का विचार है कि यदि श्रमिकों के बीच पूर्ण प्रतियोगिता हो तो बेरोजगारी के दबाव से मजदूरी की दरों में तब तक कमी होगी जब तक सभी काम चाहने वालों को रोजगार न मिल जाए। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के अनुसार, मजदूरी की दरों में कमी करके बेरोजगारी को दूर किया जा सकता है। उनके अनुसार रोजगार वास्तव में वास्तविक मजदूरी (Real wage) पर निर्भर करता है। अतः यदि वास्तविक मजदूरी में कमी की जाती है तो मूल्यों में भी कमी होगी और घटते हुए मूल्यों पर अधिक बिक्री होगी। अधिक बिक्री के चलते उत्पादन में वृद्धि करनी होगी जिसके चलते उत्पादन में वृद्धि करनी होगी, जिसके लिए अधिक लोगों को रोजगार पर लगाना होगा। मजदूरी में कमी होने से बिक्री के साथ मुनाफे में भी वृद्धि होती है जिससे रोजगार में वृद्धि होना स्वाभाविक है।

अतः प्रो. पीगू के अनुसार पूर्ण रोजगार की प्राप्ति के लिए मजदूरी में लोच का होना आवश्यक है। मजदूरी में लोच होने से मजदूरों की माँग एवं पूर्ति में संतुलन स्थापित होता है और अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार की स्थिति आती है। इसे चित्र के द्वारा भी स्पष्ट किया जा सकता है —

Scanned with CamScanner

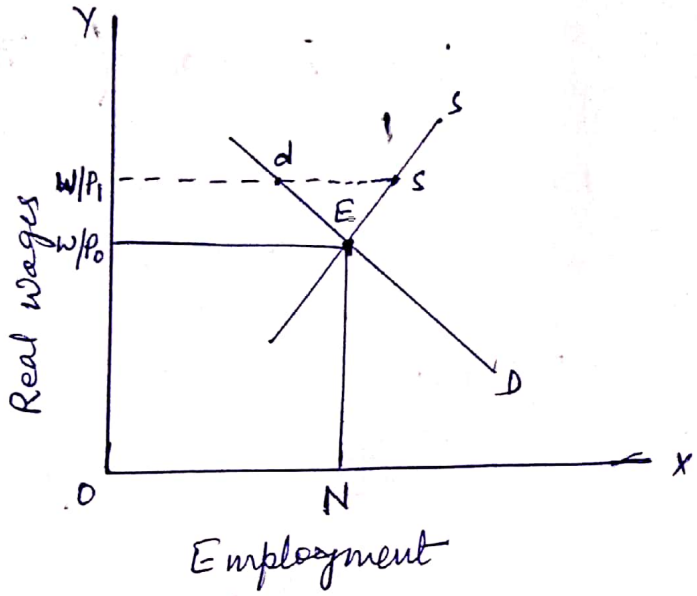

चित्र में OX रेखा पर रोजगार, OY रेखा पर मजदूरी को दिखाया गया है। D रेखा मजदूरी की माँग की रेखा है जो बतलाती है कि कम मजदूरी की दरों पर बढ़ती हुई सीमांत उत्पादकता के नियम के अनुसार अधिक मजदूरों की माँग की जाएगी। S रेखा मजदूरों की पूर्ति की रेखा है जो यह दिखलाती है कि ऊँची मजदूरी की दरों पर श्रमिकों की पूर्ति में वृद्धि होगी। W/P_1 मजदूरी की दर पर श्रम बाजार संतुलन की स्थिति में है, क्योंकि श्रमिकों की पूर्ति उनकी माँग से अधिक है। चित्र में d तथा S की दूरी इस असंतुलन में उत्पन्न बेरोजगारी को दिखलाती है। लेकिन मजदूरी की दर घटाकर W/P_0 कर दी जाती है तो श्रमिकों की माँग एवं पूर्ति E बिन्दु पर एक दूसरे के बराबर हो जाती है। अतः ON पूर्ण रोजगार स्तर एवं W/P_0 संतुलित मजदूरी की दर है। इस प्रकार मजदूरी दरों में कमी होने से पूर्ण रोजगार की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

इस प्रकार प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के अनुसार श्रमिक अपने सामूहिक सौदेबाजी एवं अन्य कार्यों द्वारा मजदूरी को ऊँची रखकर अपने साथी श्रमिकों को बेरोजगार बनाने के स्वयं दोषी हैं। अतः बेरोजगारी के जिम्मेदार स्वयं श्रमिक होते हैं, चूँकि बेरोजगारी ऊँची मजदूरी दरों का परिणाम है अतः मजदूरी की दरों में कमी लाकर बेरोजगारी को समाप्त किया जा सकता है।

— x —

Scanned with CamScanner

प्रतिष्ठित रोजगार सिद्धांत की आलोचना (Criticism of classical Theory of Employment) —

प्रो० केन्स ने रोजगार के प्रतिष्ठित सिद्धांत की कटु आलोचना की है। आलोचना का मुख्य बिन्दु इस प्रकार है:-

(1) पूर्ण रोजगार संतुलन की मान्यता अवास्तविक है — प्रो० केन्स प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों की पूर्ण रोजगार संतुलन की धारणा को अवास्तविक मानते हैं। उनका कथन है कि पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में अर्द्ध-रोजगार (Under-employment) की सामान्य स्थिति रहती है, इसका कारण यह है कि पूँजीवादी प्रणाली में 'से' का बाजार का तियम लागू नहीं होता। माँग की तुलना में पूर्ति अधिक हो जाती है जिससे अल्पोत्पादन एवं बेरोजगारी की स्थिति पाई जाती है।

(2) मजदूरी की कटौती से रोजगार में वृद्धि नहीं होती - प्रो० केन्स ने प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के इस विचार का जोरदार खण्डन किया कि मजदूरी की कटौती से रोजगार में वृद्धि होती है। इस संबंध में केन्स की आलोचना के दो पक्ष हैं -

(a) व्यावहारिक पक्ष (Practical aspect) तथा

(b) सैद्धांतिक पक्ष (Theoretical aspect)

जहाँ तक व्यावहारिक पक्ष का संबंध है तो आज श्रमिक संघ प्रजातांत्रिक समाज के अभिन्न अंग बन गए हैं तथा न्यूनतम मजदूरी एवं बेरोजगारी बीमा जैसे श्रम कल्याण से संबंधित कानूनों को नकारा नहीं जा सकता। ऐसी अवस्था में श्रमिक संघों एवं श्रम कल्याण से संबंधित कानूनों का विरोध करना अच्छा अर्थशास्त्र (good economics) होते हुए भी घुरी राजनीति (bad politics) है। मजदूरी में कमी करके रोजगार बढ़ने का प्रो० पीगू का सुझाव पूर्ण प्रतियोगी श्रम बाजार

Scanned with CamScanner

अथवा एक पूर्ण सत्तावादी अर्थव्यवस्था में लागू हो सकता है, प्रजातांत्रिक समाज में नहीं।

लेकिन सैद्धांतिक रूप से देखने पर पता चलता है कि यदि किसी प्रकार पूर्ण प्रतियोगी श्रम बाजार की स्थिति लायी भी जा सके तब भी मजदूरी में कमी करने से बेरोजगारी में कमी नहीं होगी। इसका कारण यह है कि यदि मजदूरी में कमी की जाएगी तो वस्तुओं की माँग घट जाएगी क्योंकि मजदूरी घटने से आय घट जाएगी। प्रो० केन्स के अनुसार रोजगार की मात्रा प्रभावपूर्ण माँग (effective demand) पर निर्भर करती है, न कि श्रमिकों एवं मालिकों के बीच होने वाले मजदूरी के लिए मोल-जोल (wage bargains) पर।

(3) पूर्ति अपनी मांग का सृजन स्वयं नहीं करती :- प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों का विचार था कि पूर्ति अपनी मांग का सृजन स्वयं करती है, लेकिन प्रो० केन्स के अनुसार यह धारणा गलत है। इसका कारण यह है कि लोग अपनी सारी आय को वस्तुओं तथा सेवाओं पर व्यय नहीं करते वरन् उसका एक हिस्से की बचत भी कर लेते हैं जिससे वस्तुओं की वर्तमान मांग कम हो जाती है तथा उत्पादन का एक हिस्सा नहीं बिक पाता। बचत के कारण समाज के 'आय-व्यय प्रवाह' (Income-Expenditure Flow) में व्यवधान उत्पन्न हो जाता है जिससे कुल मांग कम होती है तथा अति-उत्पादन (Over-Production) की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

(4) अर्थव्यवस्था में अनैच्छिक बेरोजगारी हो सकती है — प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के अनुसार पूर्ण रोजगार की स्थिति में ऐच्छिक एवं अस्थिर बेरोजगारी हो सकती है लेकिन अर्थव्यवस्था में अनैच्छिक बेरोजगारी कभी भी नहीं हो सकती, उनका यह विचार गलत है। वास्तविक अनुभव यह बताता है कि मंदी (depression)

Scanned with CamScanner

की अवस्था में असंख्य श्रमिक मजदूरी की चालू दरों पर ही नहीं, बल्कि इनसे भी कम दर पर काम करने के लिए तैयार रहते हैं, किन्तु इन्हें रोजगार नहीं मिल पाता है। उनकी यह बेरोजगारी न तो ऐच्छिक कही जा सकती है और न ही अस्थिर बेरोजगारी ही है। यह तो अनैच्छिक बेरोजगारी का उदाहरण है। इस प्रकार अर्थव्यवस्था में अनैच्छिक बेरोजगारी हो सकती है।

(5) अहस्तक्षेप की नीति की आलोचना :- प्रतिष्ठित अर्थशास्त्री "पूर्ण रोजगार को स्वतः समायोजन प्रणाली के लिए अहस्तक्षेप की नीति को आवश्यक मानते हैं किन्तु कीन्स कहते हैं कि पूँजीवादी प्रणाली स्वतः कार्यशील एवं स्वतः समायोजित होने वाली नहीं है। इस प्रणाली में समृद्ध एवं निर्धन वर्गों की उपस्थिति के कारण ही कुल माँग में कमी होती है। अतः इसमें संतुलन बनाए रखने के लिए सरकारी हस्तक्षेप आवश्यक है।

(6) प्रतिष्ठित सिद्धांत पूँजीवादी अर्थव्यवस्था की समस्याओं से विमुख है :-

प्रतिष्ठित सिद्धांत पूँजीवादी अर्थव्यवस्था की समस्याओं से विमुख है। प्रो० पीगू अर्थव्यवस्था में पूर्ण प्रतियोगिता को पूरी तरह बनाए रखना चाहते थे तथा सरकारी हस्तक्षेप को बेरोजगारी का कारण मानते थे, लेकिन यह विचार गलत है तथा पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में रोजगार बढ़ाने के लिए सरकारी हस्तक्षेप की आवश्यकता पड़ती है। 1929 की विश्वव्यापी मंदी के समय पूँजीवादी देशों में अति उत्पादन तथा व्यापक बेरोजगारी की समस्याएँ लोगों के सामने उत्पन्न हो गयी। उत्पादित वस्तुओं की पूर्ति स्वयं अपनी मांग का सृजन नहीं कर पायी तथा प्रतिष्ठित सिद्धांत की असत्यता पूरी तरह साबित हो गई।

—— x ——

Scanned with CamScanner